REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 6 | MARCH - 2019

विरह की व्यथा कथा 'कनुप्रिया'

डॉ. अरविंद कुमार
असि.प्रो. हिंदी , प्रेम किशन खन्ना राजकीय महाविद्यालय जलालाबाद, शाहजहाँपुर (उ.प्र.)

(यह आलेख डा.धर्मवीर की जन्म शती पर विशेष 'कनुप्रिया' के बहाने भारती जी को स्मरण करते हुए–26 दिसंबर 1926)

'नई कविता' का आरंभ 1954 ई. में जगदीश गुप्त के संपादन में प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'नई कविता' से होता है। यह पत्रिका इलाहाबाद से निकलती थी। जगदीश गुप्त के समकालीन कवि डा.धर्मवीर भारती भी थे। नई कविता ने प्रयोगवादी कविता को विस्तार दिया, क्योंकि व्यष्टि –समष्टि से परे उठ कर काल संस्कृति,लोक संस्कृति, क्षणवादी जीवन मूल्यों,आम आदमी के प्रतिदिन की दिनचर्या को सहजता एवं मुक्तछंद में सारगर्वित रूप में प्रस्तुत करती है। 'नइ कविता' के कवि अपनी परंपरा जनित इतिहास के मुद्दों, समस्याओं को वर्तमान संदर्भों के साथ जोड़ते दिखाई पड़ते हैं। नरेश मेहता की लम्बी कविता 'संशय की एक रात' एव महाकाव्य' महाप्रस्थान', जगदीशगुप्तका 'शम्बूक', 'शांता', 'जयंत', कुंवर नारायण की 'आत्मजयी' तथा धर्मवीर भारती की 'कनुप्रिया' एवं 'अंधायुग' इत्यादि कवियों की काव्य कृतियाँ मिथकीय चेतना को नई उर्जा एवं हिंदी पाठकों को इन कृतियों को पौराणिक (मिथकीय चरित्र) चरित्रों को नये रूपों में रचते हैं। ऐसी ही धर्मवीर भारती की कृति है–'कनुप्रिया'।

'कनुप्रिया' नई कविता की विशिष्ट कालजयी कृति है। इस कृति में पौराणिक चरित्र 'राधा' की विरह व्यथा कारुणिक एवं मार्मिक वेदना को नए रूप में प्रस्तुत किया गया है। 'कनुप्रिया' को धर्मवीर भारती पाँच खण्डों में विभाजित किया है। ये खण्ड हैं– पूर्व राग, मंजरी, प्रणय, सृष्टि, संकल्प, इतिहास एवं समापन । पूर्वराग में पाँच गीत हैं– पहला गीत,दूसरा गीत,तीसरा गीत,चौथा गीत एवं पाँचवां गीत। मंजरी प्रणय खण्ड में आम्रबौर का गीत, आम्र बौर का अर्थ, तुम मेरे कौन हो ? हैं । सृष्टि संकल्प तीन खण्ड हैं – सृजन–संगिनी, आदिम एवं के लिए। इतिहास खण्ड में 'विप्रलब्धा','सेतु :मैं', 'उसी आम के नीचे,'अमंगल छाया', 'एक प्रश्न', 'शब्द : अर्थहीन', 'समुद्र–स्वप्न' हैं। अंतिम समापन में 'समापन' है। सर्वप्रथम 'कनुप्रिया' शब्द का अर्थ समझना होगा। 'कनुप्रिया' शब्द दो शब्दों से बना है– 'कनु' तथा 'प्रिया'। 'कनु' शब्द पुल्लिग है तथा 'प्रिया' शब्द स्त्री लिंग हैं। धर्मवीर भारती ने अपनी कृति में नायिका 'राधा' के लिए 'कनुप्रिया' शब्द का प्रयोग किया है। राधा ने कृष्ण को लोक शब्दों में कान्ह,कान्हा, कन्हैया, मुरली वाले, बंसुरिया वाले, गिरिधर नागर, त्रिभंगी लाल, मनमोहन, माखन चोर इत्यादि का प्रयोग नहीं करती है,बल्कि कान्ह (कृष्ण) को कनु कह कर पुकारती हैं। 'कनु' शब्द 'प्रेम' का द्योतक है। राधा कृष्ण को 'प्रेम' से 'कनु' कह कर बुलाती हैं। आजकल भी लोग पूरा नाम न लेकर 'निकनेम'(उपनाम) का प्रचलन अधिक है। अब 'कनुप्रिया' का संपूर्ण अर्थ लिया जाए तो 'कनुप्रिया' का अर्थ हुआ–जो कृष्ण को प्रेम करने वाली या चाहने वाली, भक्तिभाव से सब कुछ समर्पित कर देने वाली स्त्री अर्थात कृष्ण की प्रेयसी राधा।

'पूर्वराग' खण्ड में धर्मवीर भारती ने कनुप्रिया की कैशोर्य अवस्था की भावुकता को प्राकृतिक विंबों, प्रतीकों के माध्यम द्वारा प्रस्तुत करतें हैं। नायिका का शरीरिक परिवर्तन हो रहा है वह इस परिवर्तन का अंतस रूप में अनुभव भी करती है। रास्ते में किनारे खड़े अशोक वृक्ष है जो छाया दार है लेकिन कनुप्रिया को लगता

है ये वृक्ष पुष्पहीन है। कनुप्रिया अशोक वृक्ष में कृष्ण की छवि को आभास करती है। वह कहती है,''जड़ों के सहारे/तुम्हारे कठोर तने के रेशों में/कलियाँ बन, कोंपल बन,सौरभ बन, लाली बन–/चुपके से सो गयी हूँ/ कि कब मधुमास आये और तुम कब मेरे/प्रस्फुटन से छा जाओ।''[1] यह प्रतीक्षा बसंत ऋतु के आने की है। 'कनुप्रिया' की अवस्था मुग्धा नायिका की है। वह तो कृष्ण (कनु) को स्मरण कराना चाहती है कि कही भी रहो कनु 'मैं' तुम्हीं में हूँ'। वह बुला रही है, पुकार रही है। कनुप्रिया कनु से प्रश्न करती है कि इस दैहिक शरीर में संगीत के स्वरों के रूप में कब से समाहित थे। वह कहती है,''यह जो अकस्मात/आज मेरे जिस्म के सितार के/एक– एक तार में तुम झंकार उठे हो–/सच बतलना मेरे स्वर्णिम संगीत /तुम कब से मुझमें छिपे सो रहे थे।''[2] 'तुम' शब्द सार्थक प्रयोग है प्रत्येक के लिए नहीं किया जाता है। जिसे हम 'अपना' प्रिय मानते हैं उसे 'तुम' शब्द कहकर संबोधित करते हैं। खासकर नायक–नायिका एक दूसरे के लिए करते हैं। कनुप्रिया संयोग के क्षणों को स्मृति संचारी भाव के माध्यम द्वारा प्रश्न करती है। जब मैं वस्त्रहीन होकर तुम्हारे समक्ष आती थी, तो मुझे 'लाज' आती थी। 'लाज'(लज्जा) या शर्म,हया अर्थात संकोच का भाव हैं। कवि धर्मवीर भारती ने 'लोक' प्रचलित शब्दों का प्रयोग अनायास किया है। 'लाज' अवधी का है। सदियाँ गुजर गयी हैं कनुप्रिया को ज्ञात ही नहीं है कि उसके ह्रदय पटल पर श्याम रंग कब चढ़ गया। वह जब कृष्ण के समक्ष आती है तो लजा जाती है उसका मुख मण्डल 'लाल' हो जाता हैं। वह कहती है,''मैंने अकसर अपनी हथेलियों में/अपना लाज से आरक्त मुँह छिपा लिया है/मुझे तुम से कितनी लाज आती थी।''[3] 'लज्जा' तो स्त्री का गहना होता है। कामयनी में जयशंकर प्रसाद प्रसाद ने 'लज्जा' सर्ग में श्रध्दा कहती है,''मैं प्रतिकृति की लज्जा हूँ, मैं शालीनता सिखाती हूँ।'' तीसरे गीत में कनुप्रिया यमुना के घाट से वापस घर आ रही है। कृष्ण कदंब के पेड़ के नीचे विल्कुल संसार के माया मोह से दूर खड़े हैं। कनुप्रिया अभिवादन करती है वे उसका जवाब नहीं देतें हैं लेकिन राधा तो स्वयं को कृष्ण को समर्पित कर चुकी है। वह 'अस्वीकृत' को भी 'स्वीकृत' समझ लेती है। यही नहीं सदैव के लिए 'अटूट बंधन' मान लेना, परिस्थितियों को स्वीकार कर लेना है। वह 'कनु' को स्वयं के समर्पण के 'इस संपूर्णता के लोभी तुम।' फिर भी वह चेतना शून्य है, बिना 'राग' के है गीत,संगीत,रास,रंग, हास–परिहास से कोसों दूर दिखाई पड़ते हैं। नायिका स्वयं को 'प्रेम' में पागल (पगली) तक कह देती है मनोविज्ञान की भाषा में आवशेसन डिसआर्डर का शिकार तक कहा जा सकता है। लेकिन कनुप्रिया की यह 'रोमानी' भावुकता है। अपने गीतों में भावुकता का प्रचार–प्रसार करती दिखलाई पड़ती है। कनुप्रिया की रोमानियत जयदेव,विद्यापति एवं सूर की राधा की रोमानियत से अलग हटकर है।

चौथे गीत में 'कनुप्रिया' यमुना के घाट पर दोपहर में वस्त्र उतार कर यमुना में स्वयं के शरीर को निहारती है अर्थात देखती है कई घण्टें लगातार। यह जो यमुना का जल है वह जल नहीं,उस जल में 'कनु' तुम्हारी छाया दिखाई पड़ती है। भावनाओं का अंतःस्फुरण,बाहय स्फुरण में फूटकर निकलता है। कनुप्रिया कहती है वस्त्रहीन न शरीर को यमुना के जल में स्वयं के शरीर के रोम–रोम में कनु तुम्हें महसूस करती हूँ। वह कहती है,''यह क्या तुम समझते हो/नहीं,साँवरे।''[4] राधा का यह स्पष्टीकरण प्रमाणिकता में बदलता दिखलाई पड़ता है।

संपूर्ण कृति में मांसल सौंदर्य के चित्र भरे पड़े हैं। कनुप्रिया इतनी मदोन्मत्त हो उठती है कि 'कनु' की बांसुरी की आवाज सुनकर वह दौड़ती हुई चली जाती है। तुम्हारे उस छुवन के स्पर्श का अनुभव शरीर के अणु–अणु में टीस देता रहता है। मुझे संपूर्ण बना देते हो। वह कहती है,''पर हाय वही संपूर्णता तो/इस जिस्म के एक–एक कण में बराबर ही रहती है/तुम्हारे लिए।''[5] 'संपूर्ण बना देना' द्वैयता से 'अद्वैत' में निरुपण है। 'आत्मा' का 'परमात्मा' में समाकर एकाकार हो गयी है। सौंदर्य का स्थूल(मांसल रूप) देखिए,''जो मुझे बार–बार चरम सुख के क्षणों में भी/अभिभूत कर लेती है।''[6] अशरीरी संबंधों में भी 'रूमानियत', रोमान्सिजीम का अदभुत स्फुरण का रोमांच रचते हैं। 'आम्र बौर का अर्थ' शीर्षक में 'प्रेम' के प्रति सौंदर्य का समर्पण, कनुप्रिया को जो अभी तक किसी ने स्पर्श तक नहीं किया था। कैशोर्य से युवावस्था का ताजा था कनु को राधा ने समर्पित किया

1
2
3
4
5
6

है। स्पष्ट करते हुए कहती है,''मैंने कितनी बार तुम में डूब–डूब कर कहा है/कि मेरे प्राण ! मुझे कितना गुमान है/कि मैं ने तुम्हें जो कुछ दिया है/वह सब अछूता,ताजा था,/सर्वप्रथम प्रस्फुटन था।''[7] यह सब समर्पण कर देने की ततथा थी।

कनुप्रिया की सखियाँ जब प्रश्न पूछती है,'कनु तेरा कौन है री,बोलती क्यों नहीं ?'' वह लजा जाती है,खीज उठती है कह भी देती है–'कान्हा मेरा कोई नहीं है,कोई नहीं है/मैं कसम खा कर कहती हूँ/मेरा कोई नहीं।''[8] और फिर अहसास करना कि मेरा मन तो विजली की तड़पन या तड़कने की तरह तड़प उठा। आँखों से आँसू बहने लगे। तो पश्चाताप हुआ और 'तो मैंने अपने आँचल में तुम्हें दुबका लिया।'[9]

'मंजरी प्रणय' खण्ड में वह कहती है तुम तो लीलाधारी पुरुष हो, लीलाएं करते रहते हो। मेरे बिना तुम्हारी लीलाएं पूर्ण नहीं हो सकती। क्योंकि 'तुम्हारी जन्म–जन्मान्तर की रहस्यमयी लीला/की एकांत–संगिनी मैं।''[10] कनुप्रिया 'कनु' को पगली, बावरी,नादान,जिद्दी,भी कहती हैं। मैं 'प्रेम' के अद्भुत सुख को प्राप्त करने के लिए उससे वंचित होने के सुख को त्यागना नहीं चाहती हूँ। इसलिए 'बार–बार नादानी करूँगी/तुम्हारी मुँहलगी, जिद्दी, नादान मित्र भी तो हूँ न !''[11] कनु को वह लीलाबंधु, अंतरंग सखा,रक्षक बंधु, सहयात्री, लीलातन,छायातन, संख्यातीत, ववविध नाम से संबोधित करती है। वह कहती है,''कान्ह मेरा रक्षक है, मेरा बंधु है,/सहोदर है।''[12]

'कनुप्रिया' पुनः स्पष्ट करती है कि इस समस्त ब्राह्माण्ड में 'तुम्हारी शक्ति तो मैं ही हूँ/तुम्हारा संबल/तुम्हारी योग माय,/इस निखिल संसार में ही परिव्याप्त हूँ/ विराट,/सीमाहीन,/अदम्य,/दुर्दांत।''[13] कनु मैं विविध रूपों में हूँ ,''वह मैं हूँ मेरे प्रियतम !/ वह मैं हूँ/वह मैं हूँ।''[14] इस संसार के प्रति जो भी तुम्हारी इच्छाएं है उन इच्छाओं के मूल में 'कनु' मैं ही हूँ। कनुप्रिया कहती है,''और तुम्हारी संपूर्ण इच्छा का अर्थ हूँ/केवल मैं !/केवल मैं हूँ !!/केवल मैं !!!''[15] तुम्हारी इस जगत की क्रीड़ा में सहधर्मणी की भूमिका निभा रही हूँ। इस संसार को विकसित करने में और संपूर्ण संसार की सृष्टि का विकास तथा तुम्हारा जो सगुण रूप में शरीर का अवतरण हुआ है। वह मेरा तन है,''अगर यह निखिल सृष्टि/मेरा ही लीलातन है/तुम्हारे आस्वादन के लिए–।''[16] कनुप्रिया कहती है 'कनु' तुम जिन 'शब्दों' की बात करते हो,उन शब्दों में मैं ही हूँ। स्पष्ट है,''शब्द,शब्द,शब्द,/तुम्हारे शब्द अगणित हैं कनु–संख्यातीत/पर उन का अर्थ मात्र एक है–/मैं ,मै,केवल मैं।''[17] क्योंकि इतिहास में मैं ही हूँ। स्पष्ट है,''फिर उन शब्दों से मुझी को/इतिहास कैसे समझाओंगे कनु ?''[18] इतिहास की साक्षी मैं हूँ, मुझसे ही इतिहास का निर्माण हुआ। मेरे बिना इतिहास का निर्माण नहीं हो सकता है।

युद्ध के समय भी तुम थककर बैठ जाते हो, तुम्हें मेरा स्मरण हा आता है। और तुम मेरा अनुभव करते हो,मेरे कंधों के सहारे बैठ जाते हो। स्पष्ट कथन है,''और तुम कभी मध्यस्थ हो/कभी तटस्थ/कभी युद्धरत/ और मैंने देखा कि अंत में तुम/थककर इन सब से खिन्न, उदासीन, विस्मित और/कुछ–कुछ आहत/मेरे कंधों से टिक कर बैठ गए हो।''[19] 'कनुप्रिया' के अंतस की वेदना, टीस,अंदर ही अंदर पिघलना,रोना,आँसुओं का न निकलना उसी तरह है कि युद्ध से वापस आने की करुण प्रतीक्षा करती नायिका। वह कहती है,''और अब इस क्षण तुम केवल एक भरी हुई/पकी हुई/गहरी पुकार हो।''[20] 'रामायण' और 'रामचरित मानस' की कथा में

7
8
9
10
11
12
13
14
15
16
17
18
19
20

भीलनी (शबरी) राम की प्रतीक्षा में रहती है कि एक दिन 'राम' हमारे घर अवश्य आएगें। उसकी प्रतीक्षा समाप्त होती है एक दिन राम लक्ष्मण शबरी के आश्रम में जाते है वह धन्य हो जाती है। इसी प्रतीक्षा में राधा(कनुप्रिया) भी है,''मैं पगडण्डी क कठिनतम मोड़ पर/ तुम्हारी प्रतीक्षा में/अडिग खड़ी हूँ , कनु मेरे!''[21]

कृष्ण का राधा के प्रति जो प्रेम है वह सवसे विरलतम,विशिष्ट,अद्वितीय प्रेम,जो मूर्त्त एवं अमूर्त्त दोनों रूपों में विद्यमान है। राधा तो कहती है तुम्हारे अदभुत विस्मय से युक्त प्रेम में 'बावली' हो गयी हूँ। तुम्हारे प्रेम की भाषा मैं समझ ही नहीं पाई;स्वयं को भूल गयी। यह गहनतम प्रेम की पराकाष्ठा सुधि–बुद्धि तक विसार दी है। कनुप्रिया का कथन है,''हाय ! मैं विल्कुल नहीं समझी !/यह सारे संसारे से पृथक पद्धति का/जो तुम्हारे प्यार है न/इस की भाषा समझ पाना क्या इतना सरल है/ तिस पर मैं बावरी/जो तुम्हारे पीछे साधारण भाषा थी। इस हद तक भूल गयी हूँ।''[22] मैं तो तुम्हारे प्रेम फाँस में इस कदर बंध गयी हूँ कि गली–गली ,मोहल्ले–मोहल्ल, गाँव–गाँव, नगर–नगर स्वयं की हँसी कराती फिर रही हूँ। मुझ पर हँसने वालों को कोई प्रभाव नहीं पड़ता । सिर्फ तुम्हारे रंग में रंग गयी हूँ। कनुप्रिया कहती है,''कि श्याम ले लो ! श्याम ले लो !/पुकारती हुई हाट–बाट में/नगर–डगर में/ अपनी हँसी कराती घूमती हूँ।''[23] मीरा ने सुधि–बुद्धि भुलाकर श्याम के रंग में गई और कहती थी,''मेरो तो गिरधर नागर दूजौ न कोई।'....ऊँची चढ़ि चढ़ि टेरत हाय दई। महादेवी वर्मा भी तो कहती हैं,''मैं नीर भरी दुख की बदरी।'....'मेरे हँसते अधर नहीं,जग की आँसू लड़ियाँ देखो।' धर्मवीर भारती ने 'कनुप्रिया' को आधुनिक नारी के रूप में,अकेलेपन से जूझ रही नारी के रूप में कनुप्रिया की प्रेम–पीड़ा का अद्भुत आख्यान रचा है। कनुप्रिया जयदेव के 'गीतगोविंद' की राधा तथा सूरदास की राधा से विल्कुल भिन्न राधा है। राधा का धर्मवीर भारती ने जो रूप कनुप्रिया के माध्यम से प्रस्तुत किया है। वह सूरदास की राधा से विल्कुल भिन्न है वह कृष्ण को उलाहना या उपालंब नहीं देती है। वह तो कृष्ण के प्रेम के संयोग के क्षणों का स्मरण कर स्वयं अभिभूत करती रहती है। वह कनु स्वयं को अपूर्ण मानती है। कृष्ण के बुलाने पर बिना सोचे समझे,बिना,माता–पिता की बात सुने,वह सिर्फ प्रिय का अनुसरण करती है। और चली जाती है। तुम पुकार कर आज भी मुझे बुलाती रहती हो। तुमने पुकारा मैं आ गयी–''और मै लौट रही हूँ,/हताश और निष्फल/ और ये आम क बौर के कण–कण मे/मेरे पाँवों में बुरी तरह साल रहे हैं/पर तुम्हें यह कौन बताएगा साँवरे/कि देर ही सही/पर मैं तुम्हारे पुकारने पर आ तो गयी।''[24]

कनु जब युद्ध के लिए चले गये,तो राधा कनु से विविध प्रश्न करती है। युद्ध में जाने से पूर्व तुमने मेरे बारे सोचा तक नहीं कि मेरा क्या होगा ? मेरे हृदय पर क्या बीत रही होगी ? मेरी कल्पना मेरी भावनाएं तुम्हारे लिए कुछ नहीं, फिर भी एक बार तुम्हें सोचना चाहिए था। मुझसे मिलना था। तुम्हारे मार्ग में बाधक नहीं बनती मुझे सांत्वना मिल जाती।पर मेरा मन नहीं मानता कहे बिना कहे बिना नहीं रह पा रहा है। स्पष्टतः –''अच्छा,मेरे महान कनु,/मान लो कि क्षण भर को/मैं यह स्वीकार लूँ/कि मेरे ये सारे तन्मयता के गहरे क्षण/सिर्फ भावावेश थे,/सुकोमल कल्पनाएं थी/ रंगे हुए ,अर्थहीन आकर्षक शब्द थे– ।''[25]

'कनुप्रिया' में धर्मवीर भारती ने राधा की व्यथा–कथा का ही निरूपण नहीं किया,बल्कि महाभारत के युद्ध की त्रासदी, अर्जुन एवं कृष्ण के संवाद, युद्ध सेनाओं की वस्तुस्थिति का भी वर्णन करते हैं। कनुप्रिया युद्ध को नैतिक नहीं मानती, वह इस युद्ध को अनैतिक मानती है। क्योंकि युद्ध में जय–पराजय से अपार क्षति संवेदनहीनता का परिचय मिलता है। युद्ध भूमि में कृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हैं न्याय के लिए अपनों से युद्ध भी लड़ना पड़े तो धर्म है युद्ध में अपना पराया नहीं देखा जाता है। अर्जुन का मोहभंग टूट जाता है। कनु से राधा कहती है इसी तरह 'तुम मुझसे भी समझा दो/सार्थकता है क्या बंधु ?'[26] वह युद्ध को सही नहीं करार देती है,''हारी हुई सेनाएं,जीती हुई सेनाएं/नभ को कँपाते हुए, युद्ध–घोष, क्रंदन स्वर,/भागे हुए सैनिकों से सुनी हुई/अकल्पनीय अमानुषिक घटनाएं युद्ध की/क्या ये सब सार्थक हैं ?/चारों दिशाओं से उत्तर को उड़–उड़ कर जाते हुए गिद्धों को क्या तुम बुलाते हो। (जैसे बुलाते थे भटकी हुई गायों को)''[27]

21
22
23
24
25
26
27

रूमानियत की रंग, रूप, रस, गंध, स्पर्श, में मैं कभी–कभी तुम्हारे जिस्म में समाकर तुम्हारे तेज को अर्थात तुम्हारे प्रेम को, तुम मेरे अंतस में प्रेम की अग्नि जला देते हो। तो मैं सब कुछ भूल जाती हूँ युद्ध क्या है ? न्याय–अन्याय, श्लील–अश्लील, पवित्रता, अपवित्रा के समस्त बंधन टूटकर विखर जाते हैं और मैं सिर्फ तुम्हें अनुभव करती हूँ तुम्हारी बाँहों की मजबूत पकड़ को। इसलिए मेरे लिए तुम्हारा प्रेम ही मोह है। स्पष्ट कथन है,''कर्म,स्वधर्म,निर्णय,दायित्व/शब्द,शब्द,शब्द...../ मेरे लिए नितांत अर्थहीन हैं–/मैं इन सब के परे अपलक तुम्हें देख रही हूँ/हर शब्द को अँजुरी बना कर/ बूँद–बूँद तुम्हें पी रही हूँ/और तुम्हारा तेज/मेरे जिस्म के एक–एक मूर्छित संवेदन को धधका रहा है।''[28]

'कनुप्रिया' के जिस्म की मूर्ति –अमूर्त प्यास बुझ नहीं पा रही पा रही है। क्योंकि कृष्ण के अनुपस्थित है वह तो युद्ध क्षेत्र में डटे हुए हैं। उनके साथ उठना, बैठना, रास रचाना, खेलना,रूठना –मनाना, चिढ़ाना, कनु को निहारना, राधा का कनु को निहारना, प्रेम, की चासनी में डूबे रहना,बाँसुरी वादन, लीलाएं करना इत्यादि उन्हें बेहद प्रिय लगता था। लेकिन आज वियोग की दशा में राधा के मन मस्तिक,शरीर को कौन शांत करे। उसका कथन है,''और यह समस्त सृटि रह नहीं जाती/लीन हो जाती है/जब मैं प्रगाढ़ वासना,उद्दाम की बाहों में/अचेत बेसुध सो जाती है।''

.....''और लो/वह आधारित का प्रलय शून्य सन्नाटा फिर/काँपते हुए गुलाबी जिस्मों/गुन गुने स्पर्श/कसती हुई बाहों/अस्पुट सीत्कारों/गहरी सौरभ भरी उसाँसों/और अंत में एक सार्थक शिथिल मौन से/आबाद हो जाता है/रचना की तरह/सृष्टि की तरह।''[29] यह नए जीवन के निर्माण सूक्ष्मदर्शी चरित्र है। ऐसे ही तमाम शरीर–अशरीरी संबंधों का वर्णन कनुप्रिया में मिलते हैं। अशरीरी संबंधों का वर्णन कनुप्रिया में मिलते हैं।

रूप सौंदर्य या वस्तु–सौंदर्य, भाव–सौंदर्य, उद्दीपन, संवेग, आवेग, मूर्त्त–अमूर्त्त के तल स्पर्शी चित्र भी धर्मवर भारती ने बेहद सरलता के साथ प्रस्तुत किए। शब्द–शिल्प,भाव–शिल्प, लोक शब्दो के बिंब काव्य में निबध्य किया है। वह 'कनुप्रिया' अर्थात कृष्ण(कनु) और 'राधा' के आम जन मानस में विद्यमान चरित्र को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। लोक उन प्रचलित शब्दों को प्रयोग किया है जो आमफहम की भाषा में बोले जाते हैं; जैसे कि–'नस–नस में पंख पसार', 'लाज', 'बेला', 'अलसायी','लोभी','पगली','साँवली'(साँवरे),'जिस्म','बाँसुरी', 'ढीठ', 'चंचल', 'सरचढ़ी', 'सहेलियाँ', 'साँवरे', 'महावर', 'पाँव', 'मसलकर', 'चूम लेना', 'पलके', 'पगडण्डियाँ', 'सुगंध', 'बावली', 'कुलेल', 'नादानी', 'मुँहलगी', 'जिद्दी', 'ताजी', 'क्वाँरी', 'बावरी', 'हाट–बाट', 'सहोदर', 'सखी', 'खीज', 'छेड़ा'(छेड़ना), 'कान्ह','छितवन','साँवले','सोधापन','बेसुध', 'सन्नाटा', 'आधीरात', 'बाहों','काँपते','जलपरी','अधखुले','बेबस','धूपछाँव','बटोरकर','ठिठक', 'पैताने', 'भटकती', 'पुकार' इत्यादि शब्द हैं। ये शब्द भाषा में चारुत्व उत्पन्न करते हैं ऐसे शब्दों के अर्थ खोलने में सहायक हुए हैं।

उपमा अलंकार की 'छटा–अध खुले गुलाबतन' के शरीर के सौंदर्य की तुलना की गई है। खोलने के लिए और अर्थ लिए जा सकते हैं। 'राधा' के शरीर को 'हवा' का स्पर्श भी कृष्ण(कनु) का अहसास दिलाता है,''हवा का आघात भी माँसाल हो उठा है।''[30] 'मेरा यह जिस्म वियोग व्यथा के उस बिंब को प्रकट करता है जब राधा की मनोदशा विपरीत हो उठती है जब 'कनु' अनुपस्थिति है। वह कहती है,''मेरा यह जिस्म–/टूटे खँडहरों के उजाड़ अंतःपुर में/छूटा हुआ एक सावित मणिजटित दर्पण–सा–/आधीरात दंशभरा बाहुहीन/प्यासा सर्पीला कसाव एक/जिसे जकड़ लेता है/अपनी गुंजलक में :/अब सिर्फ मैं हूँ, यह तन है, और याद है/खाली दर्पण में धँधला–सा एक प्रतिबिंब मुड़–मुड़ लहराता हुआ/ निज को दोहराता हआ !''[31] यहाँ राधा के मन की दिशा, तन की दशा, अंतरमन की दशा,सर्पीला–सर्प क समान,गुंजलक का अर्थ है सर्प के मुड़े कसाव को,रूप सौंदर्य का चित्रण किया है।

निष्कर्षतः कनुप्रिया में धर्मवीर भारती ने राधा के नए चरित्र,विरह दशा,मनोदशा, अपलक निहारती, रास्ता, प्रश्न करती राधा की जीवंत तस्वीर को प्रस्तुत किया।

28
29
30
31

संदर्भ :

1.कनुप्रिया : धर्मवीर भारती, भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, संस्करण–2014, पृ0 सं0 11
2 वही, पृ0 सं0 13
3.वही, पृ0 सं0 16
4.वही, पृ0 सं0 17
5.वही, पृ0 सं0 21
6.वही, पृ0 सं0 30
7.वही, पृ0 सं0 35
8.वही, पृ0 सं0 35
9.वही, पृ0 सं0 21
10.वही, पृ0 सं0 29
11.वही, पृ0 सं0 34
12.वही, पृ0 सं0 36
13.वही, पृ0 सं0 42
14.वही, पृ0 सं0 44
15.वही, पृ0 सं0 45
16.वही, पृ0 सं0 72
17.वही, पृ0 सं0 72
18.वही, पृ0 सं0 73
19.वही, पृ0 सं0 77
20.वही, पृ0 सं0 82
21.वही, पृ0 सं0 31
22.वही, पृ0 सं0 31
23.वही, पृ0 सं0 24
24.वही, पृ0 सं0 67
25.वही, पृ0 सं0 69
26.वही, पृ0 सं0 68
27.वही, पृ0 सं0 71
28.वही, पृ0 सं0 43–44
29.वही, पृ0 सं0 52
30.वही, पृ0 सं0 57–58

LBP PUBLICATION